॥ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ॥

भगवत्-प्रेमकी विधि

(प्रेमके वास्तविक अर्थ एवं परमार्थके सारको
निर्देश करनेवाली पुस्तिका)

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

द्वारा प्रदत्त हरिकथा

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

भगवत्-प्रेमकी विधि © गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन २०१६

प्रथम संस्करणः
शारदीय-रास-पूर्णिमा, २०११ — २०,००० प्रतियाँ
द्वितीय (संशोधित) संस्करणः
मौनी-अमावस्या, २०१६ — २०,००० प्रतियाँ

प्रकाशन-मण्डली (द्वितीय-संस्करण)
सम्पादन एवं प्रूफ-संशोधन—माधवप्रिय दास, अमलकृष्ण दास
अनुवादक—प्रेमदास
टाइप—विजयकृष्ण दास
ले-आउट—शान्ति दासी
मुखपृष्ठ चित्र—सुदर्शन दास
मुखपृष्ठ डिजाइन—कृष्णकारुण्य दास
चित्र—श्यामरानी दासी; रेखाचित्र—वासुदेव दास
आभार—मञ्जरी दासी, सुन्दरगोपाल दास, सनातन दास

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज द्वारा सम्पादित विभिन्न ग्रन्थों एवं उनकी हरिकथाओंके निःशुल्क डाउनलोड एवं शुद्धभक्ति-योगसे सम्बन्धित जानकारीके लिए जायें—www.purebhakti.com
ई-मेल द्वारा उनकी हरिकथाओंको प्राप्त करनेके लिए जायें—www.harikatha.com
उनकी हरिकथाओं और उपदेशोंको सुनने एवं देखनेके लिए जायें—www.purebhakti.tv
मासिक सचित्र पारमार्थिक पत्रिकाको प्राप्त करनेके लिए सम्पर्क करें—mathuramath@gmail.com

© गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन २०१६
पृष्ठ संख्या १४ एवं २३ पर चित्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके आदेश-निर्देशमें चित्रित। © श्यामरानी दासी। अनुमति द्वारा मुद्रित।

स्पेक्ट्रम प्रिन्टिंग प्रेस, नई दिल्लीसे मुद्रित

समर्पण

हम इस ग्रन्थको भगवान् श्रीकृष्णसे चली आ रही आत्मतत्त्वविद्, विशुद्ध ब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-सम्प्रदायकी गुरु-परम्परा द्वारा प्रवर्तित भगवत्-प्रेमकी सर्वोत्तम विचारधाराको वर्त्तमान समयमें अत्यधिक प्रभावशाली पद्धतिसे संरक्षित एवं प्रवाहित करनेवाले श्रीचैतन्य महाप्रभुके नित्य परिकर अपने उन परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके श्रीकरकमलोंमें समर्पित करते हैं, जिन्होंने परमार्थके प्रति श्रद्धावान् सम्पूर्ण विश्वके जीवोंको आत्माके स्वरूप तथा रहस्योंसे अवगत कराकर, उन्हें भगवान् श्रीकृष्णकी सेवाके अतिरिक्त अन्य अभिलाषाओंसे रहित होकर आत्माकी स्वाभाविक एवं नित्यवृत्ति—भक्तियोग अर्थात् भगवान्से प्रेम करनेकी विधिकी शिक्षा, प्रेरणा एवं उसके लिए यथार्थ लोभको उत्पन्न करनेका अतुलनीय बल प्रदान किया है—

प्रकाशन-मण्डली

विषय–सूची

प्रस्तावना ..... क–च

अनित्य वस्तुओंमें नित्य सुखकी खोज १
इस जगत्‌में हमारी वास्तविक स्थिति ४
परमसुखकी प्रतिमूर्त्ति ७
भगवान् एक हैं अनेक नहीं ९
अनेकतामें एकता ११
प्रेमका रूप १२
बाइबल और कुरानमें भी भगवान्‌के रूपकी पुष्टि .. १३
सभी प्राणियोंसे प्रेम करो १६
अनुचित स्थानपर लगा प्रेम १८
भगवत्–प्रेमका मन्त्र २१
नित्य सुखकी प्राप्तिका मार्ग २२

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका
संक्षिप्त परिचय २७

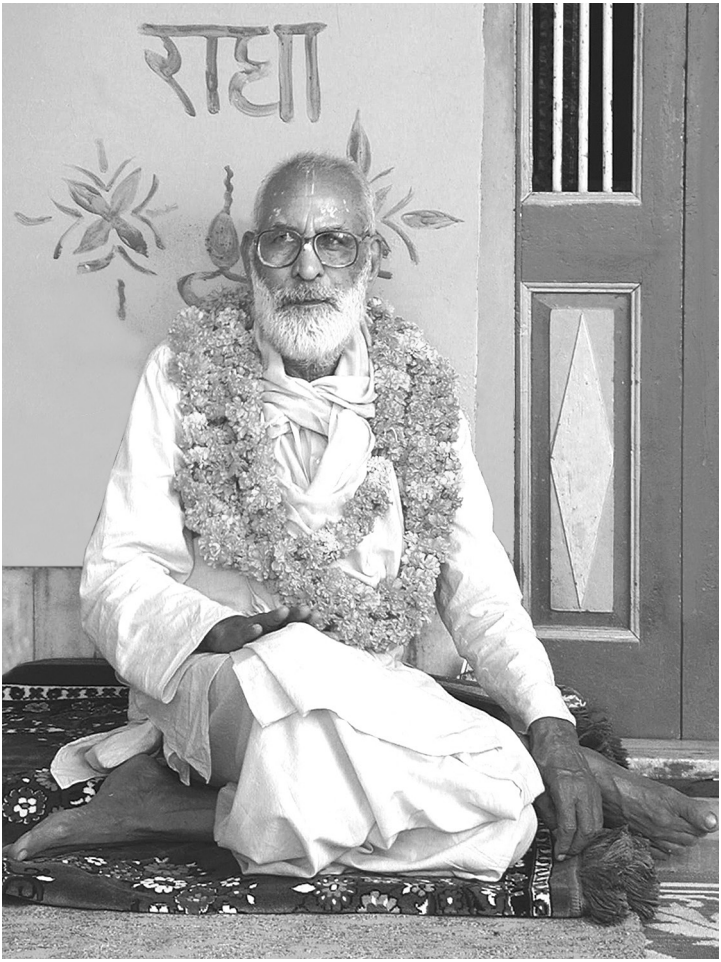

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

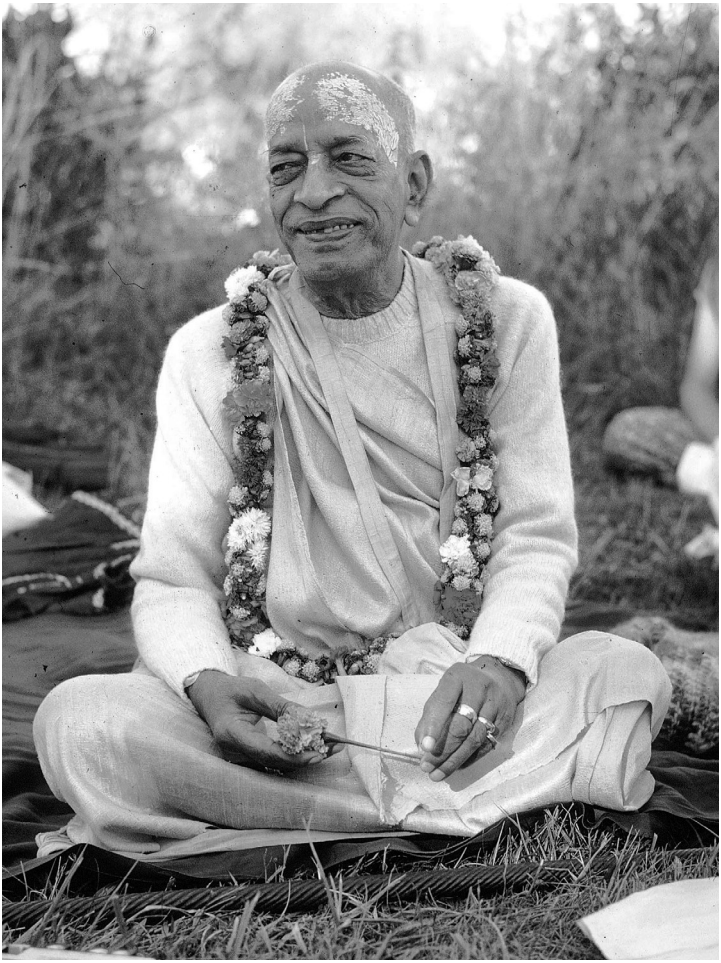

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज

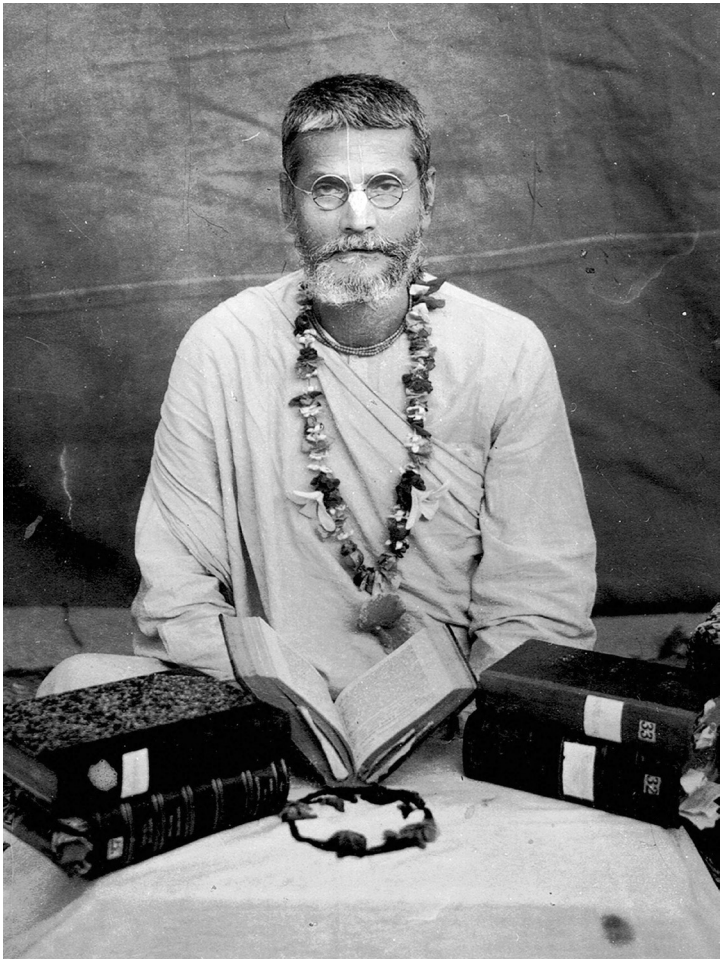

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

प्रस्तावना

इस लघु पुस्तिकाका उद्देश्य हमारे श्रील गुरुदेव नित्य-लीला-प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज द्वारा कथित उन महान ऋषि-मुनियोंकी वाणीको प्रस्तुत करना है, जिन्होंने प्राचीन भारतीय शास्त्रों अर्थात् वेदोंमें वर्णित परम-सत्यका साक्षात्कार कर लिया है। 'वेद' शब्दका शाब्दिक अर्थ है 'इस जगत् एवं आध्यात्मिक जगत्से सम्बन्धित साधारण और असाधारण सभी विषयोंका ज्ञान।'

वेद एवं उसके अनुगत शास्त्रोंकी रचना हजारों वर्ष पूर्व श्रीवेदव्यासजी एवं अन्यान्य उन सिद्ध-महापुरुषों (self-realized saints) के द्वारा की गयी है, जिनका हृदय जगत्में दुःख भोग रहे जीवोंके प्रति करुणासे द्रवित होता है। ऐसे सिद्ध महापुरुषोंको परम सत्य एवं जीवनके वास्तविक उद्देश्यका विशुद्ध ज्ञान होता है। यह 'भगवत्-प्रेमकी विधि' नामक लघु पुस्तिका भगवान्के द्वारा इस जगत्में प्रेरित एक ऐसे ही सिद्ध महापुरुष परमाराध्यतम् श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके प्रवचनोंका प्रतिलेखन है, जिन्होंने भगवत्-सेवाके उद्देश्यसे बिना किसी हेतु और स्वार्थके अपना जीवन जगत्के समस्त प्राणियोंको वास्तविक एवं नित्य सुख प्रदान करनेके लिए समर्पित कर दिया है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी एक अन्य सिद्ध महापुरुष हैं जो सम्पूर्ण विश्वमें 'श्रील प्रभुपाद' के नामसे प्रसिद्ध

हैं। उनका श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीसे शिक्षा-गुरु एवं प्रिय मित्रके रूपमें प्रगाढ़ सम्बन्ध था। श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज विश्ववासियोंको नियमित रूपसे 'भगवत्-प्रेमकी विधि' की शिक्षा देनेके पीछे श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजको ही अपना प्रमुख प्रेरणास्रोत मानते हैं।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज लिखते हैं—"जीवनका एक मूलभूत सत्य (principle) यह है कि हम सभीमें किसी-न-किसीसे प्रेम करनेकी एक स्वाभाविक वृत्ति है। कोई भी व्यक्ति किसी अन्यसे प्रेम किये बिना नहीं रह सकता। यह वृत्ति प्रत्येक प्राणीमें विद्यमान है। यहाँ तक कि चीते जैसे एक हिंसक पशुमें भी प्रेम करनेकी यह वृत्ति प्रच्छन्न या आवृत रूपमें विद्यमान है, और मनुष्योंमें तो यह वृत्ति निश्चित रूपमें प्रबल रूपसे विद्यमान है। परन्तु विचार करने योग्य बात यह है कि मनुष्य अपने प्रेमको कहाँ केन्द्रित करे जिससे सभी सम्पूर्ण रूपसे सुखी हो सकें। वर्त्तमान समयमें मनुष्य-समाज हमें स्वयंसे अर्थात् अपने स्वार्थसे अथवा अपने परिवार या अपने देशसे प्रेम करनेकी शिक्षा देता है, परन्तु उसे इस बातकी कोई भी जानकारी नहीं है कि वह प्रेम करनेकी अपनी इस वृत्तिको कहाँ केन्द्रित करे जिससे सभी व्यक्ति सम्पूर्ण रूपसे सुखी हो सकें। वास्तवमें मनुष्यके प्रेम करनेकी वृत्ति उसी प्रकारसे ही विस्तृत और वर्धित होती है जिस प्रकारसे जलकी कोई तरङ्ग, परन्तु हम यह नहीं जानते हैं कि वह समाप्त कहाँ होती है।

"बाल्यावस्थामें शिशु अपने माता-पितासे प्रेम करता है, फिर कुमार अवस्थामें अपने भाइयों एवं बहनोंसे और जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाता है, वह अपने परिवार, समाज, राष्ट्र और समस्त मानव-जाति तकसे प्रेम करना आरम्भ कर देता है। परन्तु प्रेम करनेकी उसकी यह वृत्ति समस्त मानव-जाति तकको प्रेम करनेपर भी तृप्त नहीं होती। मनुष्यकी प्रेम करनेकी यह वृत्ति तब तक सम्पूर्ण रूपसे तृप्त नहीं हो सकती जब तक वह इस बातसे अवगत नहीं हो जाता कि उसका परम प्रियतम कौन है अर्थात् उसका सर्वोत्तम प्रेमका विषय क्या है।"

हम प्रेम करनेकी यथार्थ प्रक्रियासे अवगत नहीं हैं। हमारी इस समस्याका समाधान करते हुए श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी बतलाते हैं कि प्रत्येक जीवसे सुचारू रूपसे प्रेम करनेकी यथार्थ या वैज्ञानिक प्रक्रिया उन परम पुरुषसे प्रेम करना है जिन्हें वेदोंमें श्रीकृष्ण कहा गया है।

"हम संयुक्त राष्ट्र (United Nations) की स्थापना जैसे महान प्रयास करनेके उपरान्त भी मानव-जातिमें प्रेम एवं सौहार्द स्थापित करनेमें असफल रहे हैं। हमारे असफल होनेका मुख्य कारण है कि हमें प्रेम करनेकी उचित विधिका ज्ञान नहीं है। किन्तु वह विधि बहुत ही सरल है। यदि हम श्रीकृष्णसे प्रेम करना सीख लें, तो तत्क्षणात् प्रत्येक जीवसे भी प्रेम करना बहुत सरल हो जाता है। यह वृक्षकी जड़में पानी देने अथवा पेटमें भोजन देनेके समान है। वृक्षकी जड़में पानी देने अथवा पेटमें भोजन प्रदान करनेकी विधि सर्वथा वैज्ञानिक

एवं व्यावहारिक है तथा इसे हम सभीने अनुभव किया है। हम सभी भलीभाँति जानते हैं कि जब हम कुछ खाते हैं, अर्थात् जब भोजन हमारे पेटमें जाता है, तब इस प्रक्रियाके द्वारा उत्पन्न ऊर्जा तत्क्षणात् सम्पूर्ण शरीरमें वितरित हो जाती है। इसी प्रकार जब हम किसी वृक्षकी जड़में पानी डालते हैं, तो उस पानी द्वारा किया हुआ पोषण तत्क्षणात् सम्पूर्ण वृक्षकी सत्तामें वितरित हो जाता है, वह चाहे कितना भी बड़ा वृक्ष क्यों न हो। वृक्षके प्रत्येक भागको अलग-अलग रूपसे पानी देना सम्भव नहीं है और न ही शरीरके विभिन्न अङ्गोंको पृथक्-पृथक् रूपसे भोजन कराना ही सम्भवपर है।

"हमारे असन्तोषका मुख्य कारण यह है कि भौतिक जीवनशैलीमें अत्यधिक उन्नति करनेपर भी प्रेम करनेकी हमारी आच्छादित वृत्ति (dormant propensity) की तृप्ति नहीं हुई है। हम वृक्षके सभी भागोंमें पानी देनेका प्रयास कर रहे हैं, परन्तु जड़में पानी देना भूल रहे हैं। हम अपने शरीरको सब प्रकारसे हृष्ट-पुष्ट रखनेका प्रयास कर रहे हैं, परन्तु पेटमें भोजन प्रदान करनेकी उपेक्षा कर रहे हैं।

"परमात्माको भूलनेका अर्थ स्वयंको भूलना है। आत्म-साक्षात्कार एवं परम मनमोहक प्रेमके स्रोत भगवान् श्रीकृष्णका साक्षात्कार एक ही साथ होता है। उदाहरणतः प्रातः कालमें स्वयंको देखनेका अर्थ है कि हम सूर्योदयको भी देख रहे हैं, क्योंकि सूर्यकी प्रभाको देखे बिना कोई स्वयंको नहीं देख सकता। एक जीवात्माका दूसरी जीवात्मासे सम्बन्ध जब परमात्मासे सम्बन्धित होकर अर्थात् परमात्माको केन्द्र करके स्थापित किया जाता है, तभी वह वास्तविक

सम्बन्ध कहलाता है। शरीरपर आधारित सम्बन्ध संसारमें बन्धनका कारण हैं, परन्तु आत्माके स्तरपर आधारित सम्बन्ध संसार-बन्धनसे मुक्तिका कारण हैं। एक जीवात्माका दूसरी जीवात्मासे वास्तविक सम्बन्ध केवलमात्र परमात्मासे सम्बन्धको बीचमें रखकर ही स्थापित किया जा सकता है। अन्धकारमें दर्शन करना दर्शन नहीं है, परन्तु सूर्यके प्रकाशके माध्यमसे देखनेका अर्थ है—सूर्यको देखना एवं उन सभी वस्तुओंको देखना जो अन्धकारमें दर्शनीय नहीं थीं।"

प्राणीमात्रके पारमार्थिक कल्याणके लिए करुणासे परिपूर्ण श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी भी अपने श्रोताओंको शिक्षा प्रदान करते हुए कहते हैं—

"अपने जीवनको सफल, सुखमय और शान्तिमय बनानेके लिए अपने सम्पूर्ण प्रेम और स्नेहको भगवान् श्रीकृष्णको समर्पित करनेका प्रयास कीजिये। प्रेमके विषय—श्रीभगवान्से सभीको अवगत करवाइये एवं सभी प्राणियोंके भगवान्से सम्बन्धयुक्त होनेके कारण उन प्राणियोंके प्रति प्रेम-भाव रखिये और अपने सर्वस्वको उनकी सहायता करनेमें लगाइये। जो प्रेमके कारण किसी दूसरेके निकट जाता है, उसे उनसे कुछ भी लेना नहीं होता, अपितु अपना सबकुछ देना होता है। जिस प्रकार वृक्ष बिना किसी प्रतिफलकी आशासे दूसरोंको अपनी छाल, फल-फूल, पत्ते, लकड़ी, जड़ और छाया प्रदान करते हैं, उसी प्रकार हमें भी दूसरोंके प्रति अपने व्यवहारमें वृक्षकी भाँति निस्वार्थ होना चाहिये।"

ऐसे निस्वार्थ प्रेमको अनुभव करनेकी विधि श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज द्वारा प्रदत्त कथाओंके माध्यमसे

इस लघु पुस्तिकामें दी गयी है। सभी वैदिक शास्त्रोंके परम उद्देश्यकी भाँति इस लघु पुस्तिकाका उद्देश्य भी हमें यह शिक्षा प्रदान करना है कि किस प्रकार एक विशेष विधिके पालन द्वारा जीवोंके अज्ञानरूपी अन्धकारमय जीवनको तत्क्षणात् प्रकाशमान किया जा सकता है।

इस लघु पुस्तिकाका अधिकांश भाग श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके द्वारा १४ जून, २००३ को बरमिंघम, इंग्लैंडमें स्थित प्रसिद्ध कस्टर्ड फैक्टरीमें दिये गये प्रवचनसे संग्रहित किया गया है। इस प्रवचनके श्रोताओंमें विश्वके मुख्य-मुख्य धर्मोंके प्रतिनिधि तथा बरमिंघम शहरके Lord (मेयर) भी उपस्थित थे। इस लघु पुस्तिकामें वर्णित सभी ऐतिहासिक कथाएँ सत्य हैं, श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीने इन्हें वेदोंके अंश—पुराणों एवं उपनिषदोंसे उद्धृत किया है।

हम आशा करते हैं कि इस लघु पुस्तिकामें वर्णित शिक्षाप्रद कथाओंके माध्यमसे श्रद्धालु पाठकगण भगवत्-प्रेमको प्राप्त करनेकी विधिसे अवगत होकर उस पथपर अग्रसर होनेकी प्रेरणा प्राप्त करेंगे। इति।

श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-कृपालेश-प्रार्थी
प्रकाशन-मण्डली

भगवत्-प्रेमकी विधि

अनित्य वस्तुओंमें नित्य सुखकी खोज

इस संसारमें सभी प्राणी अपने-अपने जीवनमें चिरकालीन सुख प्राप्त करनेके लिए संघर्षमय प्रयासमें रत हैं। परन्तु हमारे वैदिक शास्त्रोंमें वर्णित है कि इस भौतिक जगत्की अनित्य वस्तुएँ हमें कभी भी वास्तविक सुख प्रदान नहीं कर सकतीं। इस जगत्में मनुष्य कितनी भी उच्च-उपाधिको प्राप्त क्यों न कर ले, वह अतृप्त ही रहता है। धनी, युवा, सुन्दर, शिक्षित, यशस्वी एवं प्रभावशाली होनेपर भी मनुष्य सदा ही अधिक सुखी होनेके लिए किसी अन्य वस्तुकी आकांक्षा करता ही रहता है।

साधारण मनुष्योंकी तो बात ही क्या, बड़े-बड़े देशोंके राष्ट्रपति और प्रधानमन्त्री भी असन्तुष्ट रहते हैं। समस्त इतिहासमें यह तथ्य प्रकाशित है कि समृद्ध एवं शक्तिशाली व्यक्ति जैसे कि नेपोलियन तथा इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनीके राजा एवं रानियाँ अपनी उच्च-सामाजिक उपाधियोंके होनेपर भी अत्यन्त दुःखी थे। वर्त्तमान समयमें हम ऐसा इंग्लैंडकी पूर्व राजकुमारी डायना एवं अमेरिकाके पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन आदिके जीवनमें भी देख सकते हैं। इस संसारमें हमें जो थोड़ा-सा सुख मिलता है, वह क्षणिक और पीड़ासे मिश्रित है। वह सुख निरन्तर और चिरकाल तक प्राप्त नहीं होता और न ही वह सुख पूर्ण और निर्मल है। भौतिक जगत्में निम्नतम-लोकसे लेकर उच्चतम-लोकतक सर्वत्र ही

नाना प्रकारकी विपदाएँ विराजमान हैं और वास्तविक नित्य सुखका अभाव है।

इस जगत्में स्वयंको पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाशरूपी निर्जीव पाँच-तत्त्वोंसे बना हुआ जड़-शरीर समझनेवाला कोई भी जीव सुखी नहीं रह सकता, कारण—जीव जड़ या अचेतन वस्तु नहीं, अपितु चेतन वस्तु है। इस मानव जीवनका वास्तविक उद्देश्य जन्म-मृत्युके चक्रमें प्राप्त होनेवाले इस जड़-शरीररूपी कारागारसे मुक्त होनेका उपाय ढूँढ़ना है। हम अपने जड़-शरीरको सन्तुष्ट करके प्रसन्न होना चाहते हैं, परन्तु वृद्धावस्था अतिशीघ्र ही हमें आ पकड़ती है और हमारी भौतिक कामनाएँ पूर्ण न होनेके कारण हम पछताते हैं। हमें जो भौतिक सुख मिलता है, वह वास्तविक सुख नहीं है, अपितु वह तो एक बहुत बड़ी विपत्ति है। हम यह नहीं समझ पाते कि आत्मा जो शरीर और मनसे भिन्न वस्तु है, उसका स्वरूप चिन्मय, नित्य तथा ज्ञान और आनन्दसे परिपूर्ण है। अतः हम केवल ऐसी वस्तुसे ही सन्तुष्ट हो सकते हैं, जो चिन्मय, शाश्वत एवं सच्चिदानन्दमय हो—वह वस्तु एकमात्र श्रीभगवान् और उनसे हमारा प्रेममय सम्बन्ध ही है।

वर्त्तमान समयमें हम चिकित्सा, यातायात एवं संचारके क्षेत्रोंमें अनेक आविष्कार एवं अनुसन्धान कर रहे हैं। यदि किसी व्यक्तिके नेत्र खराब हो जायें, तो चिकित्सक उन्हें किसी मृत व्यक्तिके देहसे निकाले गये नेत्रोंके द्वारा परिवर्त्तन भी कर सकते हैं। हम अति सहज रूपमें विश्वके एक भागसे दूसरे भागमें कुछ ही घण्टोंकी यात्रासे पहुँच सकते

हैं। हम अपने घरमें बैठकर विश्वके अन्य स्थानोंपर हो रही गतिविधियों, खेल-कूद आदिको देख सकते हैं तथा हम अमेरिकाके राष्ट्रपतिको वाशिंग्टन स्थित व्हाइट-हाउसमें भाषण देते हुए देख सकते हैं।

परन्तु ऐसी वैज्ञानिक उन्नतिके होते हुए भी लोग आज पहलेसे अधिक दुःखी हैं। हम अभी भी वृद्धावस्था और मृत्युको रोक नहीं पाये हैं और न ही हम युद्ध, आतङ्कवाद अथवा रोगोंका निवारण कर पाये हैं। नये-नये रोग निरन्तर उत्पन्न हो रहे हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीके विकासने हमें सुख प्रदान नहीं किया है, बल्कि इसके द्वारा हम अधिक भयभीत, भौतिकतावादी एवं स्वार्थी हो गये हैं।

आधुनिक विज्ञान असफल हो रहा है। इसका कारण है कि वास्तवमें यह बहुत विकसित नहीं है। आधुनिक वैज्ञानिक मन तकको भी नहीं देख सकते जो कि भौतिक किन्तु सूक्ष्म है, फिर आत्मा जिसका स्वरूप सम्पूर्णतः दिव्य है, उसे देखनेकी तो बात ही क्या? प्रौद्योगिकीके विकासके कारण हम सोचते हैं कि हम बहुत उन्नत हो गये हैं, परन्तु हमने केवल इतना ही किया है कि भौतिक शरीरकी आवश्यकताओंको बढ़ा दिया है और आत्माकी आवश्यकताओंको भूल गये हैं। आज हम परम भगवान्‌से प्रेम करनेकी उपेक्षा करते हैं और इसीलिए हमारे हृदयमें एक दूसरेके प्रति भी वास्तविक प्रेम और सौहाद नहीं है।

आजकल लोग कुत्ते और बिल्लियोंपर अपने मित्रों एवं परिवारिक सम्बन्धियोंसे अधिक विश्वास करते हैं। आजके समयमें प्रायः पति-पत्नी एक साथ नहीं रह पाते और

विवाह-विच्छेद (divorce) तो सामान्य बात हो गयी है। माता-पिता अपने बच्चोंका तथा बच्चे अपने माता-पिताका त्याग कर रहे हैं। प्रायः प्रत्येक व्यक्ति ही अपने शरीर और मनके स्वार्थको तुष्ट करनेमें व्यस्त है।

जो व्यक्ति जन्म, व्याधि, वृद्धावस्था एवं मृत्युके अन्तहीन चक्रको समाप्त करना चाहते हैं, वे इसकी वैज्ञानिक विधिकी शिक्षाको प्राचीन वैदिक संस्कृतिसे प्राप्त कर सकते हैं। इस समस्याके पूर्ण समाधानमें आधुनिक विज्ञान या विद्याका अध्ययन किसी प्रकार भी सहायता नहीं कर पायेगा, क्योंकि नाशवान वस्तुओंके द्वारा हमें कदापि नित्य सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

इस जगत्में हमारी वास्तविक स्थिति

एक बार जङ्गलमेंसे जाते हुए एक व्यक्तिने शेरकी आवाज सुनी। वह भयभीत होकर भागने लगा और इधर-उधर आश्रय ढूँढ़ने लगा। इतनेमें वह एक अन्धकारमय कुएँके पास पहुँचा, जो जल नहीं रहनेके कारण उपयोगमें नहीं था। उस कुएँकी दीवारोंपर चारों ओरसे घास और पौधे उग आये थे और समीप ही एक वृक्ष भी था। वृक्षकी दो शाखाओंको पकड़कर वह व्यक्ति कुएँमे लटक गया और यह सोचकर सन्तोष अनुभव करने लगा कि अब वह शेरकी पहुँचसे बाहर है। परन्तु जैसे ही वह शाखाओंको पकड़कर कुएँमें नीचे लटका, उसने देखा कि नीचे बहुत-से साँप हैं। वे साँप उसे देखकर उसे डसनेके लिए अपना फन उठाकर फुफकारने लगे।

उन दो शाखाओंपर लटकते हुए उस व्यक्तिने अनुभव किया कि उसकी समस्या तो अब और भी गम्भीर हो गयी है। कुएँमें नीचे अनेक विषैले साँप उसे डसनेके लिए प्रतीक्षा कर रहे थे और ऊपर एक भयावह शेर उसे खानेके लिए खडा था। उस समय वह अत्यधिक चिन्तासे पीड़ित हो गया।

इतनेमें ही एक काले और एक सफेद—दो चूहोंने उन दो शाखाओंको कुतरना आरम्भ कर दिया जिन्हें उस व्यक्तिने पकड़ रखा था। अब थोड़ा ही समय बचा था कि दोनों चूहोंके द्वारा उन शाखाओंको कुतर दिये जानेपर वह व्यक्ति साँपोंसे भरे गड्ढेमें गिरनेवाला था। इस दुरावस्थासे मुक्ति पानेके लिए उसे या तो ऊपर चढ़ना था और शेरका शिकार बनना था अथवा नीचे उतरना था और साँपोंके द्वारा डसा जाना था। दोनों ही अवस्थाओंमें उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी थी।

इस अति भयानक स्थितिमें वृक्षके हिलनेके कारण वृक्षकी शाखाओंमें स्थित एक मधुमक्खीके छत्तेमेंसे एक-एक बूँद करके शहद उसके मुखके समीपसे ही टपकने लगा। सुख भोगनेके इस अवसरका लाभ उठाते हुए उसने अपनी जिह्वाको बाहर निकाला और टपकते हुए शहदकी एक-एक बूँदको मुखमें लेने लगा। शहदका आस्वादन करते हुए वह सोचने लगा, "आहा! अति मधुर! अति मधुर!" थोड़ा-सा सुख मिलनेपर वह व्यक्ति पूर्णतः भूल गया कि वह किस भयावह परिस्थितिमें था।

इस उदाहरणकी सभी परिस्थितियाँ हमारी निजी अवस्थाको लक्षित करती हैं। इस उदाहरणमें जङ्गलमें फँसा व्यक्ति हम सभी जीवोंको लक्षित करता है, जो संसाररूपी जङ्गलकी

एक भयानक परिस्थितिमें आसक्त होकर फँसे हुए हैं। कारण—शेररूपी काल (मृत्यु) हम सभीका क्षण-क्षणमें पीछा कर रहा है। हम किसी भी क्षण मर सकते हैं। हमारे भौतिक या जागतिक प्रयास हमारी रक्षाके सार्थक उपाय नहीं है। साँपकी फुफकार हमारी उन सभी समस्याओंको लक्षित करती है, जो समुद्रकी लहरोंके समान एक-के-बाद एक हमारे सामने उपस्थित होती रहती हैं। हम सोचते हैं, "अरे! यह समस्या मेरी समस्याओंमें अन्तिम है, अतः इस समस्याका समाधान होते ही मैं सुखी हो जाऊँगा।" परन्तु कभी-कभी अगली समस्यारूपी लहर अधिक विशाल होती है और कई बार तो अनेक लहरें अर्थात् समस्याएँ एक साथ आ जाती हैं।

वृक्षकी दो शाखाएँ पूर्व जन्मोंमें किये गये हमारे अच्छे-बुरे, पवित्र-अपवित्र दो प्रकारके सकाम कर्मोंके परिणामोंकी सूचक हैं। हम अपना जीवन अपने पूर्व-पूर्व जन्मोंमें किये गये धार्मिक (पुण्य) अथवा अधार्मिक (पाप) कर्मोंके फलोंको भोगते हुए व्यतीत करते हैं। दोनो प्रकारके कर्मफल मिलाकर ही हमारे वर्त्तमान जीवनकी अवधि होती है, जो क्षण-क्षणमें कम होती जाती है। काला चूहा रात्रि और सफेद चूहा दिनका सूचक है, अर्थात् दिन और रात चूहोंकी भाँति हमारे जीवनकी अवधिस्वरूप दोनों शाखाओंको कुतर रहे हैं। प्रत्येक नए दिनके आने और उसके जानेपर हम बहुत प्रसन्न होते हैं, परन्तु वास्तवमें नए दिनोंके आने और जानेका एकमात्र अर्थ यही है कि हमारे जीवनकी अवधि कम होती जा रही है।

इतनी समस्याओं और भयके बीच शहदकी जो एक बूँद हमारी जिह्वापर गिरती है, वह उस क्षणिक सुखकी सूचक है जो हम इस संसारमें अपने मित्रों एवं सम्बन्धियोंके साथ अनुभव करते हैं।

परमसुखकी प्रतिमूर्त्ति

उपनिषदोंमें एक ऐतिहासिक कथा वर्णित है। एक समयमें याज्ञवल्क्य नामक एक आत्म-साक्षात्कारसे सम्पन्न सिद्ध महात्मा थे, जो महान एवं विख्यात महाराज जनककी राजसभामें कार्यरत थे। उन्हें वेदोंका पूर्ण ज्ञान था और वे शरीरमें आत्मा और परमात्माकी उपस्थितिसे पूर्णतः अवगत थे।

याज्ञवल्क्यकी दो पत्नियाँ थीं—मैत्रेयी और गार्गी। वृद्धावस्था आनेपर एक दिन याज्ञवल्क्यने अपनी दोनों पत्नियोंको बुलाया और कहा, "हमने बहुत वर्षों तक गृहस्थ जीवन यापन किया है। मैंने सम्पत्तिके रूपमें बहुत-सा स्वर्ण और गो-धन (गाय) एकत्र किया है और मैंने तुम दोनोंको अनेक सन्तानें प्रदान की हैं। अब जब कि मैं वनमें जाना चाहता हूँ, मेरी इच्छा है कि मैं अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति तुम दोनोंमें विभाजित कर दूँ, जिससे कि तुम दोनों मेरे वनमें चले जानेपर भी अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत कर सको। यह कार्य सम्पन्नकर लेनेपर तुम दोनों मुझे कृपा करके वनमें जानेकी अनुमति दो, जिससे कि मैं निश्चिन्त होकर श्रीभगवान्का एकाग्र रूपसे ध्यान कर सकूँ।"

यह सुनकर गार्गी प्रसन्न हो गयी और बोली, "भगवान्में ध्यान लगानेका आपका उद्देश्य अति उत्तम है। आप मेरे

स्वामी हैं, अतः मैं इस कार्यमें अवश्य ही आपकी सहायता करूँगी।"

किन्तु मैत्रेयीने अपने पति याज्ञवल्क्यसे कहा, "मेरा एक प्रश्न है, और उसका उत्तर देकर आप प्रसन्न चित्त होकर वनमें जा सकते हैं। आप वनमें जाना चाहते हैं, क्योंकि अपने जीवनकालमें संगृहीत समस्त सम्पत्ति, स्वर्ण अथवा अपनी पत्नियों, बच्चों एवं मित्रोंके साथ भी आप अपने हृदयमें सन्तोष एवं प्रसन्नता प्राप्त नहीं कर पाये हैं। तब फिर क्या आप सोचते हैं कि ये सब वस्तुएँ हमें प्रसन्न कर सकेंगी?"

याज्ञवल्क्यने उत्तर दिया, "तुम वास्तवमें मेरे प्रति समर्पित पत्नी हो। इस उत्तम प्रश्नको पूछकर तुमने मुझे अति प्रसन्न किया है। इस प्रश्नका उत्तर सभी वैदिक शास्त्रोंमें वर्णित है। स्वर्ण एवं सम्पत्ति अथवा समाजमें उच्चस्थान, विद्या, कीर्त्ति, मित्रगण एवं परिवार कभी भी किसीको वास्तविक सुख प्रदान नहीं कर सकते। इस जगत्में धन और धनसे प्राप्त होनेवाली प्रत्येक वस्तु कभी भी हमें वाञ्छित सुख प्रदान नहीं कर सकती। हम श्रीभगवान्के विभिन्न-अंश हैं और भगवान् ही समस्त सुखके स्रोत हैं। अतएव एकमात्र उनकी सेवा करनेमें ही नित्य वास्तविक सुख प्राप्त होता है। इस संसारमें हम जिस सुखका अनुभव करते हैं, वह अल्प और नश्वर है। भगवान् आनन्दमय अप्राकृत सम्बन्धोंके सागर हैं और परमसुखकी प्रतिमूर्त्ति हैं। एकमात्र वे ही हमें सम्पूर्ण रूपसे सन्तुष्ट कर सकते हैं।"

भगवान् एक हैं अनेक नहीं

हम सभीका भगवान्‌के साथ सम्बन्ध होनेके कारण हम सभी एक ही परिवारके सदस्य हैं। यद्यपि परिवारके सदस्योंकी भाँति व्यक्तिगत रूपसे हम सबमें भिन्नता है, परन्तु फिर भी हम सभी एक ही सूर्यपर निर्भर हैं और हम सभी एक ही वायुमें श्वास ले रहे हैं। यही अनेकतामें एकताका सिद्धान्त है। इसीसे प्रमाणित होता है कि हम सभीका उत्पत्ति स्थल एक ही है। भाषा और संस्कृतिकी भिन्नताके कारण हिन्दु उन्हें ब्रह्म, परमात्मा, भगवान्, कृष्ण आदि, इसाई God तथा मुस्लिम अल्लाह इत्यादि नामोंसे पुकारते हैं।

भाषा और संस्कृतिकी भिन्नता कैसे उत्पन्न होती है? इस विषयमें प्रायः सभीको कुछ-न-कुछ अनुभव है, तथापि मैं उसके लिए आपके समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ—ईसामसीह जब लगभग सोलह वर्षके थे, तब वे भारत गये थे और उन्होंने कई धार्मिक तीर्थ-स्थलों जैसे वृन्दावन, अयोध्या, जगन्नाथ पुरी एवं दक्षिण भारत इत्यादिका भ्रमण किया था। पुरीमें उन्होंने भगवान् श्रीजगन्नाथ, श्रीबलदेव एवं सुभद्राजीके विग्रहोंका दर्शन किया था और वहींपर उन्होंने यह सुना था कि भगवान् श्रीजगन्नाथ (अर्थात् जगत्‌के नाथ) को श्रीकृष्णके नामसे पुकारा जाता है। भारतके उस भाग (उड़ीसा) में 'कृष्ण' नामका उच्चारण 'क्रूष्ण' किया जाता है। ग्रीक, हीब्रू आदि विभिन्न भाषाओंके भेदसे यह नाम क्रूस्ट, फिर कृस्ट और अब क्राइस्टके नामसे उच्चारित होता है। वास्तवमें कृष्ण, क्रूष्ण, कृस्ट और अब क्राइस्ट—ये सब एक ही भगवान्‌के नामके उच्चारण हैं।

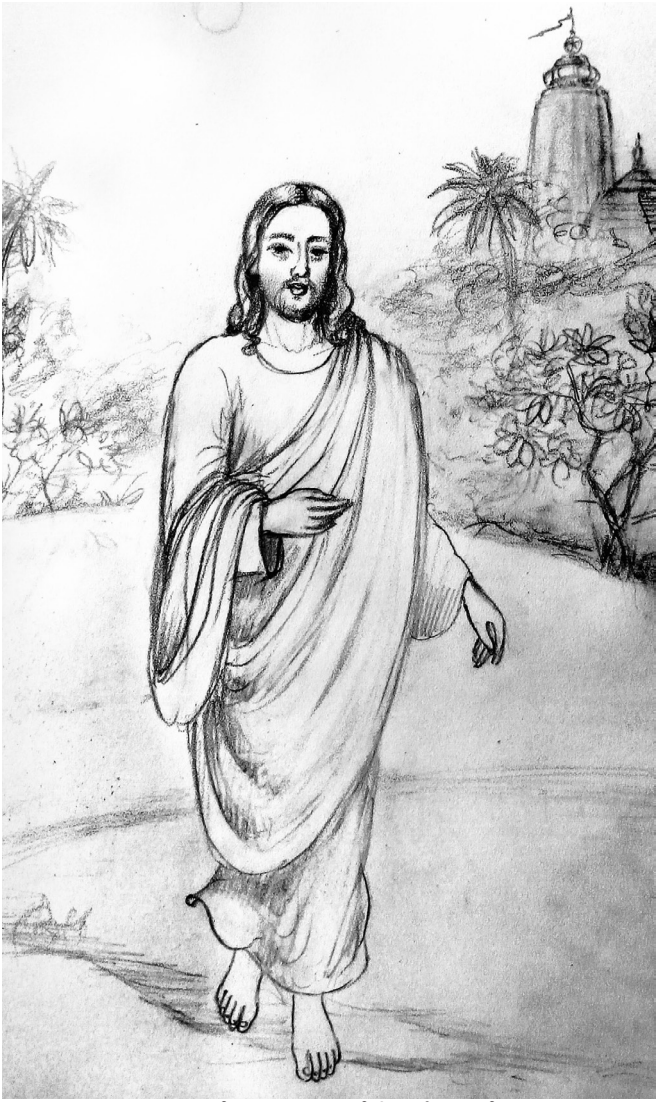

श्रीजगन्नाथ पुरीमें ईसामसीह

इसलिए ऐसा नहीं है कि इंग्लैंड, अमेरिका एवं भारतमें भिन्न-भिन्न भगवान् हैं। वास्तवमें हिन्दु, मुस्लिम एवं इसाई एक ही भगवान्‌की उपासना कर रहे हैं।

भगवान् एक हैं और वे ही प्रेमकी मूर्त्ति हैं। भगवान्‌का मुख्य नाम 'श्रीकृष्ण' है, जो वेदोंमें वर्णित है और इसका अर्थ है—'सर्वाकर्षक आनन्दका स्रोत।' अन्य सभी नाम जैसे परमात्मा, बुद्ध, अल्लाह, यीशु इत्यादि नाम इसी कृष्ण नाममें निहित हैं।

अनेकतामें एकता

भगवान् श्रीकृष्ण हम सबके परम पिता हैं और हम सभी उन्हींके विभिन्न-अंश हैं। इस कारण हम सभीमें एकता (अभेद) है, किन्तु हमारा नित्य व्यक्तिगत स्वरूप अर्थात् अस्तित्व होनेके कारण हममें अनेकता (भेद) भी है। इसी सत्यके प्रति जागरूक रहनेसे ही हमें वास्तविक नित्य सुख और शान्तिका अनुभव होगा, क्योंकि यही नित्य सत्य है। यदि लोगोंमें भगवान्‌के प्रति विश्वास नहीं रहे अथवा भगवान् एवं सभी जीवात्माओंके प्रति प्रेम नहीं रहे तब अनेकतामें एकता निरर्थक होगी।

यद्यपि भिन्न-भिन्न स्थानोंके लोग हिन्दी, अँग्रेजी, स्पैनिश, जर्मन, उर्दु आदि भिन्न-भिन्न भाषाओंमें भगवान्‌से प्रार्थनाएँ करते हैं, तथापि भगवान् उन सभीकी प्रार्थनाओंको सुनते हैं, कारण—उन भगवान्‌को अतिसहज रूपमें मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग तथा देवताओं द्वारा बोली जानेवाली सभी भाषाओंका ज्ञान है। वास्तवमें भगवान्‌को इन सभी भाषाओंको

जाननेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सम्पूर्ण जगत्में केवलमात्र एक ही वास्तविक भाषा है और उसका नाम है 'प्रेम'। नेत्र उस भाषाको बोल सकते हैं, कान उसे सुन सकते हैं और एक खिलखिलाता हुआ मुख उस प्रेमके विषयमें सब कुछ बतला सकता है।

यद्यपि हम सभी एक ही परमात्माके विभिन्न-अंश हैं, फिर भी हमने पृथ्वीको यह कहकर भिन्न-भिन्न भागोंमें बाँट दिया है कि "यह मेरा देश है और वह तुम्हारा देश है।"

यदि हम एक ही भगवान्से प्रेम करते हैं, तब फिर हम आपसमें कलह क्यों करते हैं? हम कलह इसलिए करते हैं, क्योंकि हम यह नहीं जानते हैं कि वास्तविक प्रेम क्या है। यदि हम एक ही परम भगवान्के प्रति सच्चा प्रेम-भाव रखते हैं, तो हम स्वाभाविक रूपसे एक दूसरेसे भी प्रेम करेंगे। एक कहावत है कि "God is love and love is God" अर्थात् "ईश्वर ही प्रेम हैं और प्रेम ही ईश्वर है।" भारतीय वैदिक संस्कृतिमें भी एक उक्ति है—"सर्वे भवन्तु सुखिनः अर्थात् सभी सुखी रहें।"

प्रेमका रूप

वेदोंमें ऐसा कहा गया है कि परम भगवान्का एक अलौकिक दिव्य रूप एवं व्यक्तित्व है और वे अद्भुत लीलाएँ करते हैं। वे सर्व-आकर्षक एवं सर्वशक्तिमान हैं। वे अद्वितीय हैं अर्थात् उनके समान दूसरा कोई भी नहीं है। वे भगवान् अर्थात् God: G-generator सृष्टिके रचयिता; O-operator सृष्टिके पालनकर्त्ता और D-destroyer सृष्टिके संहारकर्त्ता हैं।

वे समस्त ब्रह्माण्डका पालन एवं पोषण करते हैं। श्रीब्रह्माजी, श्रीनारद मुनि, श्रील व्यासदेव आदि भारतीय ऋषि-मुनियोंने हमें बतलाया है कि भगवान्‌का रूप अति सुन्दर है और उनमें अगणित दिव्य गुण हैं।

कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ शास्त्रोंमें भगवान्‌को निराकार कहा गया है, परन्तु इन शास्त्रोंमें प्रयुक्त 'निराकार' शब्दका अर्थ यह है कि भगवान्‌का कोई भौतिक रूप नहीं है तथा उनके गुण एवं विशेषताएँ भी भौतिक नहीं हैं। उनके रूप एवं गुण चिन्मय हैं। वे सर्वशक्तिमान हैं, अतः उनमें रूप ग्रहण करनेकी शक्ति है। यदि वे रूप, गुण, शक्ति एवं कृपासे रहित हैं, तो उनका अस्तित्व ही सम्भव नहीं है। ऐसेमें न तो वे हमारी प्रार्थनाएँ ही सुन सकते हैं और न ही हमारी कोई सहायता ही कर सकते हैं, फिर हमें नित्य आनन्द प्रदान करनेकी तो बात ही क्या? हम कृपा, शक्ति एवं गुणरहित निराकार भगवान्‌को नहीं मानते। यदि वे कृपा जैसे दिव्य गुणोंसे रहित हैं, तो हमारे द्वारा उनकी आराधना करनेका कोई मूल्य अथवा उद्देश्य ही नहीं रह जाता।

बाइबल और कुरानमें भी भगवान्‌के रूपकी पुष्टि

बाइबलमें कहा गया है, "God created man after His own image—भगवान्‌ने मनुष्यको अपने ही अनुरूप बनाया है।" यदि भगवान्‌का कोई रूप नहीं है, तो बाइबलमें ऐसा क्यों कहा गया है? भगवान्‌का रूप दिव्य है, नश्वर नहीं एवं उन्होंने अपने रूपके अनुरूप ही मनुष्यकी सृष्टि की है। ऐसा भी कहा जाता है कि ईसामसीह भगवान्‌के पुत्र

प्रेमके रूप—भगवान् श्रीकृष्ण

हैं। यदि पुत्रका रूप है तो पिताका भी रूप अवश्य ही होगा। यदि पिताका कोई रूप नहीं है अथवा उनमें कोई गुण नहीं हैं, तो पुत्रका भी रूप नहीं होगा एवं उसमें कोई गुण नहीं होंगे और न ही उसका कोई अस्तित्व ही सम्भव है। वस्तुतः भगवान्का रूप सर्वाधिक सुन्दर है। उनमें सभी दिव्य गुण हैं और वे समस्त शक्तियोंसे परिपूर्ण हैं।

कुरानमें कहा गया है, "इनल्लाह कलकामें सुरतिहि"—खुदा अर्थात् अल्लाहका रूप है और उसी रूपसे उन्होंने मनुष्यकी सृष्टि की है। 'सुरतिहि' शब्दका अर्थ है 'रूप' और 'अल्लाह' शब्दका अर्थ है 'महानतम्'। अल्लाहके समान महान कोई भी नहीं है। समस्त ब्रह्माण्ड और यह समस्त सृष्टि उनमें निहित है।

भगवान्के विषयमें वेदोंका जो मत है, वह भी इसी बातकी पुष्टि करता है और यह भी कहता है कि परम भगवान् श्रीकृष्ण, विभुओंमें विभुत्तम और साथ ही लघुओंमें लघुत्तम भी हैं।

भगवान्का वर्णन करनेके लिए शास्त्रोंमें जो 'निराकार', 'निर्गुण' और 'निर्विशेष' आदि शब्दोंका प्रयोग हुआ है, इन शब्दोंके मूल शब्द 'आकार', 'गुण' और 'विशेष' हैं। केवल इन मूल शब्दोंसे पहले 'नि' उपसर्ग लगाकर मूल शब्दके भावको बदला गया है। वस्तुके 'आकार' की धारणा स्वीकार किये बिना 'आकार' रहित होनेकी धारणा करना सम्भव नहीं है। अतएव इससे यह सुनिश्चित होता है कि परम और अनादि तत्व—भगवान् साकार, सगुण एवं सविशेष हैं और 'कृपारूपी' गुण निश्चित ही उनके गुणोंमें एक प्रमुख गुण है।

सभी प्राणियोंसे प्रेम करो

प्रायः ऐसा सोचा जाता है कि केवल मनुष्य ही भगवान्‌के परिवारके सदस्य हैं, परन्तु यह सत्य नहीं है। भगवानने् सभी जीवोंकी सृष्टि की ही है, इसलिए प्राणीमात्र भगवान्‌की सन्तान हैं। अतएव "सर्वे भवन्तु सुखिनः अर्थात् सभी सुखी हों" यह उक्ति केवल मनुष्योंके लिए ही नहीं है।

भगवान्‌ने गायोंकी भी सृष्टि की है और वे गायें बिना किसी भेदभावके और बिना कोई मूल्य लिये सभीको दूध प्रदान करती हैं। वेदोंमें गायको 'गो-माता' कहा गया है, क्योंकि वह हम सबका अपने दूधसे पोषण करती है। बाइबलमें कहीं भी यह नहीं लिखा गया है कि हम गाय अथवा किसी अन्य पशुका वध कर सकते हैं। बाइबलकी मूल अरार्माइक भाषामें 'ब्रोसिमस' शब्दका प्रयोग बीससे भी अधिक बार किया गया है। 'ब्रोसिमस' शब्दका अर्थ है 'भोजन' और इसका अनुवाद 'मीट' शब्द कहकर किया गया है। प्राचीन अंग्रेजी भाषामें 'मीट' (meat) शब्दका अर्थ 'मांस' अर्थात् 'आमिष' नहीं अपितु 'भोजन' था। परन्तु अंग्रेजी भाषामें परिवर्त्तनके कारण आज अधिकतर लोग भूल-भ्रान्तिवशतः यह मानते हैं कि पवित्र बाइबल पशु-मांसके भोजनका समर्थन करती है।

"Old Testament" में स्पष्ट रूपसे लिखा है "Thou shall not kill", इसका अर्थ है कि मनुष्य, पशु आदि किसी भी प्राणीकी हत्या करना निषेध है। कुरान भी गायोंकी हत्या और गो-मांसके भक्षणकी अनुमति नहीं देती। परमात्माने पशुओंकी सृष्टि हमारे भोजनके लिए नहीं की है। हमारे भोजनके लिए उन्होंने फल, कन्द-मूल, दूध, मक्खन, अनाज

एवं सब्जियोंकी सृष्टि की है। यदि हम भगवान्‌की किसी भी सन्तान, मनुष्यकी तो बात ही क्या, पशु आदि प्राणी तकको भी कष्ट पहुँचाते हैं, तो भगवान् हमसे कभी भी प्रसन्न नहीं होंगे, फिर अपनी माता—गायका वध करनेसे वे अप्रसन्न होंगे, इस विषयमें तो कहना ही क्या?

वृक्ष, लताएँ, पशु और कीट इत्यादि एक ही भगवान्‌की सन्तान हैं। भारतीय वैदिक संस्कृतिमें ऐसा कहा जाता है कि हमें उस खेतमें नहीं चलना चाहिये जिस खेतको जोतनेके बाद बीज बो दिये गये हो, क्योंकि ऐसे खेतमें चलनेसे बीज नष्ट हो सकते हैं। हमें किसी भी प्राणीको दुःख अथवा कष्ट नहीं देना चाहिये।

हम सभी उन परमात्माकी सन्तान हैं, जो परमानन्दकी साक्षात् मूर्त्ति और सबके लिए सर्वोत्तम सुखके स्रोत हैं। हम उन 'आनन्द' रूपी भगवान्‌के ही विभिन्न-अंश हैं। परमात्मा और हममें केवल इतना ही अन्तर है कि वे विभु (असीम) हैं और हम लघु (सीमित) हैं। श्रीभगवान्‌के सभी गुण हममें भी हैं, किन्तु सीमित या अल्प मात्रामें, परन्तु दुर्भाग्यवश हम भगवान्‌से अपने सम्बन्धको भूल गये हैं। हमें उस सम्बन्धको अनुभव करनेका प्रयास करना चाहिये। अतः हमें अन्यान्य धार्मिक चिन्ताधाराओंके अनुयायियोंसे लड़ना-झगड़ना नहीं चाहिये। सभी प्राणियोंका एकमात्र वास्तविक धर्म 'प्रेम' है, दूसरा कुछ भी नहीं। हमें भगवान्‌से एवं उन्हींके साथ सम्बन्धके आधारपर एक-दूसरेसे भी प्रेम करना चाहिये। केवल इसी विधिसे लोग संसारमें सुखपूर्वक रह सकते हैं।

अनुचित स्थानपर लगा प्रेम

एक समय भर्तृहरि नामक एक अत्यधिक योग्य और सुन्दर राजा थे। वे सभी कलाओंमें निपुण थे। राजा भर्तृहरिने पच्चीस वर्षकी आयुमें विवाह किया था और वे अपनी सुन्दर रानीसे बहुत प्रेम करते थे। रानीको प्रसन्न करनेके लिए आतुर राजाने उसे एक मणियोंसे जड़ित हार भेंट किया, जिसका मूल्य आजकी गणनाके अनुसार कई करोड़ रूपये होगा। उन्होंने स्वयं ही अपने हाथोंसे रानीके गलेमें वह हार पहनाया तथा उसे कहा, "प्रिये! मेरे द्वारा अत्यधिक प्रीतिपूर्वक पहनाया गया यह हार बहुत ही मूल्यवान है, इसे सदा अपने पास रखना।"

यद्यपि राजा भर्तृहरि अपनी रानीके प्रति अत्यधिक आकर्षित थे, परन्तु रानीका राजाके प्रति वैसा आकर्षण नहीं था। बल्कि वह राजाके परम सुन्दर सेनापतिके प्रति आकर्षित थी। अतएव रानीने राजासे प्राप्त उस बहुमूल्यवान हारके मिलनेके कुछ दिनोंके पश्चात् ही सेनापतिको प्रसन्न करनेकी इच्छासे वह हार उसे भेंट कर दिया।

यद्यपि रानी सेनापतिके प्रति अत्यधिक आकर्षित थी, परन्तु सेनापतिके हृदयमें रानीके प्रति वैसा आकर्षण नहीं था, क्योंकि वह एक वेश्याके प्रति आसक्त था। सेनापतिने हार मिलनेके कुछ दिनके पश्चात् वेश्याको प्रसन्न करनेके लिए वह हार उसे भेंट कर दिया। किन्तु इधर वेश्याका सेनापतिके प्रति वैसा आकर्षण नहीं था, अपितु वह राजा भर्तृहरिके प्रति आसक्त थी। एक दिन उसने राजाको प्रसन्न करनेकी इच्छासे वही हार राजाको भेंट कर दिया। उस हारको

वेश्या द्वारा राजाको हार भेंट

देखकर राजाको बहुत आश्चर्य हुआ। तब राजाने वेश्यासे पूछा कि यह हार उसे कहाँसे मिला। भयभीत वेश्याने कोई उत्तर नहीं दिया। राजाने क्रोधित स्वरमें कहा, "यदि तुमने मुझे सत्य नहीं बतलाया तो मैं तुम्हारा सिर कटवा दूँगा।" तब वेश्याने राजाको सबकुछ सच-सच बतला दिया। वेश्यासे सब वृतान्त सुनकर राजाने सेनापतिको अपने पास बुलवाया।

राजा भर्तृहरिने सेनापतिसे पूछा, "तुम्हें यह हार कहाँ-से मिला? यदि तुम सत्य बतलाओगे तो मैं तुम्हें दण्ड नहीं दूँगा, किन्तु यदि तुम सत्यको छुपानेका प्रयास करोगे, तो मैं तुम्हारा सिर कटवा दूँगा।" तब सेनापतिने भी राजाको सबकुछ सच-सच बतला दिया। उस क्षण राजाने यह अनुभव किया कि इस जगत्में वास्तवमें सच्चा प्रेम है ही नहीं। राजाने उसी समय अपनी समस्त जागतिक आसक्तियोंका त्याग करनेका निश्चय किया। उन्होंने अपने सभी सम्बन्धियों, अपने राजमहल, राज्य एवं बहुमूल्य वेशभूषाको त्याग दिया तथा जागतिक वस्तुओंके प्रति अनासक्त होकर भगवान्का भजन करनेके उद्देश्यसे अन्य स्थानपर चले गये। वे एक त्यागी एवं आध्यात्मवादी व्यक्तिके रूपमें प्रसिद्ध हुए।

[सम्पादकीय—राजा भर्तृहरिका शोक एवं क्रोध उनके उस प्रेमके कारण उत्पन्न हुआ जिसके अनुचित स्थानपर लगनेके कारण उसमें खटास आ गयी और वह निरर्थक हो गया। इसका कारण है कि राजाको यह ज्ञात नहीं था कि वास्तवमें इस जगत्के सम्बन्धोंमें प्रेम है ही नहीं। प्रेम तो एकमात्र परम-प्रेममय-वस्तु—श्रीभगवान्से सम्बन्धयुक्त होनेपर ही अनुभव किया जा सकता है। उन श्रीभगवान्को ठीक-से नहीं समझनेके कारण राजा भर्तृहरिको जिस पीड़ाको झेलना पड़ा, उसका अनुभव जगत्मे प्रायः सभीको है।]

भगवत्-प्रेमका मन्त्र

यदि हम वास्तवमें सुखी होना चाहते हैं, तो हमें निश्चित् रूपसे भगवान्‌की सेवामें नियुक्त होना होगा। वैदिक शास्त्रोंमें इस प्रक्रियाको भक्तियोग कहा गया है। भक्तियोगका अर्थ है—भगवान्‌की सेवाके माध्यमसे भगवान्‌के साथ सम्बन्ध स्थापित करना। सब प्रकारसे भगवान्‌की प्रसन्नतापर ध्यान देनेसे व्यक्ति स्वतः ही प्रसन्नता और शान्तिका अनुभव करता है। ऐसी दिव्य चेतनामें स्थित होनेपर वह पशु अथवा मनुष्य किसी भी जीवको कष्ट नहीं पहुँचाता, और परिणामस्वरूप वह सबके साथ शान्तिपूर्वक रह सकता है।

भगवत्-भक्तिके विकासके तीन स्तर हैं—'साधनभक्ति' अर्थात् साधनाका स्तर, 'भावभक्ति' अर्थात् दिव्य-भावके उत्पन्न होनेका स्तर और 'प्रेमभक्ति' अर्थात् भगवत्-प्रेमके पूर्ण प्रकाशित होनेका स्तर।

शुद्ध-प्रेमको प्राप्त करनेके लिए हम भक्तिका प्रारम्भ साधनके स्तरसे करते हैं। कलह और कपटसे युक्त इस कलियुगमें सर्वाधिक शक्तिशाली साधन तथा सुख प्राप्त करनेका सर्वोत्तम उपाय है—भगवान्‌के नामोंका कीर्त्तन। भगवान्‌के नाम स्वयं-भगवान्‌से अभिन्न हैं और उनके नामोंमें उनकी समस्त शक्तियाँ और उनके मधुर रूप एवं लीलाएँ भी सन्निहित हैं। शुद्ध-प्रेमकी अवस्थामें ही इसका पूर्ण रूपसे अनुभव होता है। भगवान्‌के नामोंका कीर्त्तन क्रमशः हृदयकी समस्त अवाञ्छित इच्छाओं और वासनाओंका नाश कर देता है और उस समय साधकको दिव्य शान्ति और भगवान्‌के साथ अपने अप्राकृत सम्बन्धका अनुभव होता है।

कलि-सन्तरण उपनिषद्में कहा गया है, "कलह और कपटसे परिपूर्ण इस कलियुगमें उद्धार प्राप्तिका एकमात्र उपाय है भगवान्के नामोंका कीर्त्तन। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है, कोई उपाय नहीं है, कोई उपाय नहीं है।" भगवान्के नामोंका कीर्त्तन इस महामन्त्रके द्वारा किया जाता है—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

नित्य सुखकी प्राप्तिका मार्ग

वर्त्तमान समयमें जल, वायु और प्रायः प्रत्येक वस्तु ही दूषित है। लोग कीटोंका नाश करनेके लिए रसायनिक खादके रूपमें खेतोंमें विषका छिड़काव करते हैं और इस प्रकार अनाज और उसे खानेवाले व्यक्ति भी विषाक्त हो जाते हैं। जिस प्रकार महासागर रसायनिक कचरेरूपी विषके द्वारा दूषित होकर मछलियों और मत्स्याहारी व्यक्तियोंको भी विषाक्त कर देता है, उसी प्रकार भौतिक ध्वनिकी तरङ्गें भी वातावरणको प्रदूषित एवं विषाक्त करती हैं। अपशब्द, दूसरोंकी निन्दा, कलह इत्यादि और यहाँ तक कि किसी भी भौतिक ध्वनिकी तरङ्ग संसारके प्रत्येक व्यक्तिके मन, इन्द्रियों एवं हृदयको दूषित करती है। हम इस प्रदूषण और उससे उत्पन्न पीड़ाको एकमात्र उपरोक्त 'हरे कृष्ण' महामन्त्रके कीर्त्तन द्वारा ही दूर कर सकते हैं।

इसे समझनेके लिए एक बड़े तालाबका उदाहरण सार्थक है। यदि आप एक पत्थर लेकर उसे तालाबमें फेंकें, तो तालाबमें जो लहरें उत्पन्न होती हैं वे उसके सभी तटोंको

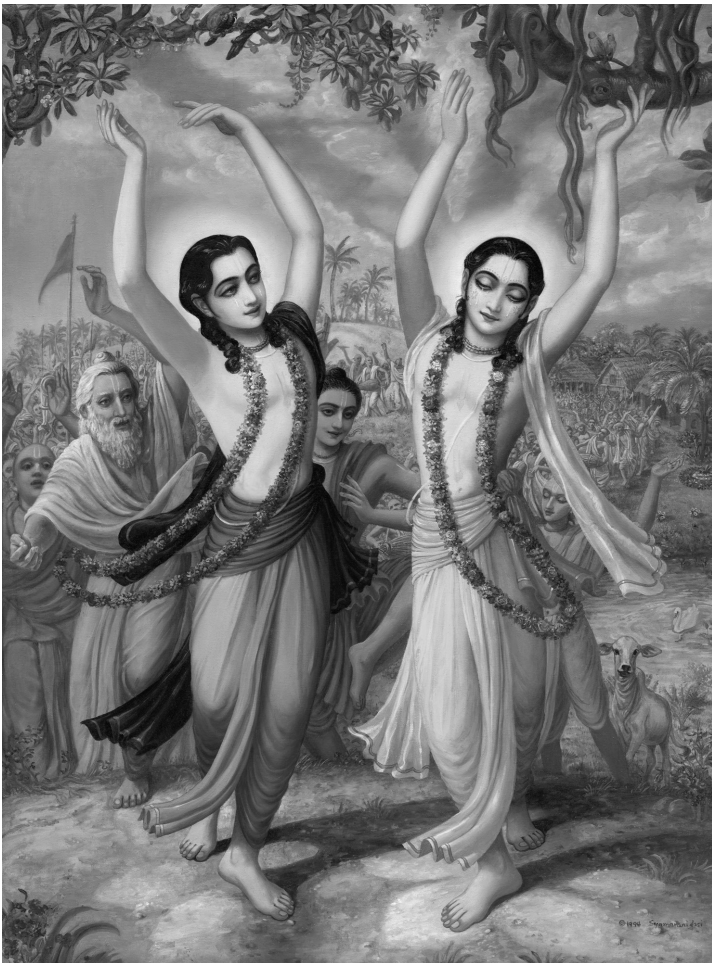

श्रीभगवान्के नाम-सङ्कीर्त्तनमें रत श्रीश्रीगौर-निताइ

स्पर्श करती हैं। यह ब्रह्माण्ड उस तालाबके समान है। *"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे"* का कीर्त्तन आध्यात्मिक ध्वनिकी अनेक तरङ्गोंको उत्पन्न करता है। ये ध्वनिकी तरङ्गें इस ब्रह्माण्डकी सीमा तक सभीको स्पर्श करती हैं और सर्वत्र विचरण करती हुई सम्पूर्ण ब्रह्माण्डको हर प्रकारके प्रदूषणसे मुक्त कर देती हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण अचिन्त्य शक्तियोंसे युक्त हैं। वे एक क्षणमें अगणित ब्रह्माण्डोंकी सृष्टि कर सकते हैं और एक क्षणमें ही उन्हें नष्ट भी कर सकते हैं और फिर पुनः उन्हीं ब्रह्माण्डोंकी सृष्टि कर सकते हैं। उन्होंने अपनी समस्त शक्तियों, समस्त कृपा एवं समस्त ऐश्वर्यको अपने नामोंमें सन्निहित करके रखा है और इसके परिणामस्वरूप उनके दिव्य नाम भी असीमित शक्तिसे परिपूर्ण हैं। ये नाम आध्यात्मिक (दिव्य) ध्वनिकी तरङ्गोंके रूपमें अति शीघ्र ही समस्त ब्रह्माण्डमें विचरण करते हैं और ब्रह्माण्डके प्रदूषणको क्रमशः विदूरित कर देते हैं।

वृक्ष, लताएँ, पशु एवं कीट बोल नहीं सकते और न ही वे हमारी भाषा समझ सकते हैं। तथापि श्रीभगवान्‌के नामोंके कीर्त्तनसे केवल मनुष्य ही नहीं, अपितु इस ब्रह्माण्डके सभी जीव-जन्तु इन दिव्य नामोंकी ध्वनि-तरङ्गोंका स्पर्श प्राप्त करते हैं, चाहे वे इन नामोंकी शक्तिसे अवगत हों अथवा नहीं। यदि कोई अग्निका स्पर्श जान-बूझकर करे अथवा अनजानेमें भी करे, तो उसे निश्चित ही अग्निके प्रभावका अनुभव होगा। उसी प्रकार भगवान्‌के इन दिव्य नामोंके कीर्त्तनसे उत्पन्न ध्वनि-तरङ्गोंके स्पर्शमें आनेवाले वृक्ष, लता,

मनुष्य आदि सभी प्राणी शुद्ध और सञ्जीवित हो उठेंगे चाहे वे इन नामोंकी शक्तिसे अवगत हों अथवा नहीं हों।

यदि हम उच्च स्वरमें भगवान्के नामोंका कीर्त्तन करें, तो हमारी समस्त इन्द्रियाँ शुद्ध हो जायेंगी। उस समय हमारे लिए कुछ भी निन्दनीय नहीं बचेगा और हमारे लिए कोई दुःखमय स्मृतियाँ भी नहीं रहेंगी। भौतिक प्रयासोंके द्वारा हम अपने मनमें आनेवाले दुःखपूर्ण एवं विनाशकारी विचारोंको नियन्त्रित नहीं कर सकते, परन्तु भगवान्के नामोंके कीर्त्तनके द्वारा सहज ही उन विचारोंपर विजय प्राप्तकी जा सकती है। नाम-कीर्त्तनके द्वारा हमारे हृदय पवित्र हो जायेंगे और तब हमें अनुभव होगा कि हमारा वास्तविक स्वार्थ—हमारे प्राणोंके प्राण—श्रीकृष्ण हैं और हम उनके नित्य दास हैं। अतएव यदि हम नाम-सङ्कीर्त्तनके माध्यमसे प्रेमके मूर्त्तिमानस्वरूप भगवान् श्रीकृष्णकी सेवा करें, तो हमारा एवं समस्त विश्ववासियोंका नित्य एवं चिरकालीन कल्याण होगा।

"ईश्वर ही प्रेम हैं और प्रेम ही ईश्वर है"
"हरे कृष्ण मन्त्रका जप करें एवं सुखी रहें"

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका संक्षिप्त परिचय

इस दुःखमय जगत्के जीवोंके प्रति परम करुणावशतः श्रील गुरुदेव—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज वर्ष १९२१ ई॰ में मौनी-अमावस्याकी शुभ तिथिपर भारतवर्षके बिहार राज्यके बक्सर जिलेमें स्थित तिवारीपुर ग्राममें एक शुद्ध-वैष्णव परिवारमें आविर्भूत हुए थे।

१९४६ ई॰ में श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको भगवान् श्रीकृष्णसे चलती आ रही गुरु-परम्पराके अन्तर्गत एक तत्त्वदर्शी गुरु—उनके श्रीगुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजका प्रथम दर्शन प्राप्त हुआ एवं उसी समयसे श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा आचरित और प्रचारित गौड़ीय-वैष्णव-धर्मके प्रति उनका सम्पूर्ण-समर्पित जीवन प्रारम्भ हुआ।

जगत्के बद्धजीवोंके नित्य कल्याणके लिए श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके श्रीगुरुदेवने उन्हें अपने साथ सम्पूर्ण भारतमें श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी-प्रचारके कार्यमें एवं विभिन्न गुरुत्वपूर्ण दायित्व प्रदानकर मठ-मिशनकी अनेक सेवाओंमें सक्रिय आत्मनियोग कराया। इन सेवाओंमें एक प्रमुख सेवा थी प्रतिवर्ष श्रीचैतन्य महाप्रभुकी आविर्भाव-तिथिके उपलक्ष्यमें श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमा एवं कार्तिक-मासमें व्रजमण्डल परिक्रमाके आयोजनका दायित्व, जिसका श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने अपने अन्तिम समय तक अति

सुष्ठु रूपसे निर्वाह किया। उनके गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने १९५४ ई॰ में मथुरामें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठकी स्थापना करके उन्हें मठ-रक्षकके रूपमें नियुक्त किया एवं प्रमुख गौड़ीय-वैष्णवाचार्योंके ग्रन्थोंका राष्ट्रभाषा हिन्दीमें अनुवाद करनेका निर्देश प्रदान किया। श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने अपने सम्पूर्ण जीवनकाल तक परम उत्साह और यत्नके साथ अपने श्रीगुरुपादपद्मका आदेश पालन करते हुए राष्ट्रभाषा हिन्दीमें टीकाओं सहित बहुत-से ग्रन्थोंका अनुवाद तथा सम्पादन किया, जिसके फलस्वरूप हिन्दीमें प्रायः साठसे भी अधिक प्रमुख गौड़ीय-ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

इन ग्रन्थोंका अनुशीलन करनेसे यह सहज ही अनुभव होता है कि श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज पारमार्थिक-ज्ञानके प्राचीन ग्रन्थ—वेदादि शास्त्रोंके सार-विषयोंके प्रकाण्ड विद्वान एवं अनुभवी हैं। उनके अनेक ग्रन्थ अँग्रेजी तथा विश्वकी अन्य प्रमुख-प्रमुख भाषाओंमें अनुवादित हो चुके हैं तथा क्रमशः हो रहे हैं एवं हजारों व्यक्तियोंको एक नया जीवन तथा पारमार्थिक प्रेरणा प्रदान कर रहे हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी एवं उसके अन्तर्गत गौड़ीय-दर्शनका प्रचार करनेके लिए श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने बहुत वर्षों तक सम्पूर्ण भारतका परिभ्रमण किया एवं १९९६ ई॰ से उन्होंने विदेशमें प्रचारसेवा आरम्भ की। परवर्त्ती पन्द्रह वर्षोंमें उन्होंने सम्पूर्ण विश्वकी प्रायः चौंतीस बार परिक्रमा की है। क्या देश, क्या विदेश, उनका

जीवन एवं प्रचारकार्य सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रील रूप गोस्वामी एवं विश्वव्यापी गौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता जगत्-गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादकी विचारधाराको सम्पूर्ण रूपसे आत्मसात् करनेवाले अपने दीक्षा-गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज तथा शिक्षा-गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजकी विचारधारा एवं वाणीका पालन एवं संरक्षण करनेमें व्यतीत हुआ। यदि कहीं पर भी भक्तिसिद्धान्तोंमें कुछ भूल दिखलायी दी अथवा कहीं पर भक्तिशास्त्रोंकी व्याख्यामें कुछ परिवर्त्तन दिखलायी दिया, तो श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने निर्भीकतापूर्वक शास्त्रप्रमाण एवं युक्तिके द्वारा उन विचारोंका यथास्थान खण्डन तथा संशोधन करके यथार्थ सत्यको स्थापित किया है। इस प्रकार वर्त्तमान समयमें उन्होंने गौड़ीय-सम्प्रदायकी विचारधारा, महिमा और गौरवका संरक्षणकर एक वास्तविक आचार्यका कार्य किया है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने भारत एवं विश्वके अनेकानेक स्थानोंपर भ्रमण करके वहाँके लोगोंके समक्ष श्रीमद्भागवत, गीता आदि वैदिक शास्त्रोंसे आत्माके रहस्यमय तत्वोंका उद्घाटन करके जीवात्माकी स्वाभाविक एवं नित्यवृत्ति—भक्तियोग अर्थात् भगवान्से प्रेम करनेकी विधिकी शिक्षा प्रदान की है। सम्पूर्ण विश्वके विवेकवान्, निरपेक्ष तथा धर्म-परायण व्यक्तियोंके द्वारा श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको भगवान्के प्रति प्रेम-भाव तथा विश्ववासियोंमें सौहादके प्रचार और प्रसारके अवदानके कारण मान्यता प्राप्त है।

इस प्रकार श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने सम्पूर्ण विश्वमें श्रीचैतन्य महाप्रभुके आर्विभूत होनेके कारण तथा उनके द्वारा आचरित एवं प्रचारित प्रेमधर्मका प्रचार-प्रसार करते हुए २९ दिसम्बर, २०१० ई॰ को श्रीजगन्नाथपुरी धामके अन्तर्गत चक्रतीर्थ स्थित जयश्रीदामोदर गौड़ीय मठमें प्रायः नब्बे वर्षकी आयुमें अपनी भौमजगत्की लीला सम्वरण की। श्रीजगन्नाथ पुरीसे यात्रा करके श्रीचैतन्य महाप्रभुके विशेष प्रतिनिधि एवं उनकी अद्वितीय करुणाके मूर्त्तिमान विग्रह श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने श्रीनवद्वीपधाममें समाधि ग्रहण की। श्रील गुरुदेव—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज अपनी अमृतमय-अप्राकृत-वाणीरूपी शिक्षाओंमें एवं अपने निष्कपट शरणागतजनोंके हृदयमें चिरकालके लिए ही विराजमान हैं।